आखर हिंदी पत्रिका; e-ISSN-2583-0597 खंड 1/अंक 2/मार्च 2022
Received: 08 /09/2021; Accepted: 26/02/2022; Published: 24/03/2022

राजेश जोशी के काव्यों में सामाजिक संदर्भ

लता.बी.
शोधार्थी
हिन्दी विभाग
विश्वविद्यालय कॉलेज, मंगलूर
ई-मेल: lathamadavu@gmail.com

लता.बी. ,**राजेश जोशी के काव्यों में सामाजिक संदर्भ** ,आखर हिंदी पत्रिका, खंड 1/अंक 2/मार्च 2022, (54-58)

समाज की सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक समाज में उत्पन्न होनेवाली किसी भी प्रकार की कोई भी विचारधारा, भावना, दृष्टि, कर्म आदि जो मानव द्वारा अपने ही समाज में की जाती है वह समाज का यथार्थ कहलाती है। मानव की इन क्रियाओं का समाज पर प्रतिकूल या अनुकूल प्रभाव पड़ता ही है।

समाज मानव निर्मित है और मानव ने जिस समाज की कल्पना कर उसे निर्मित किया था उस समाज का व्यास बहुत अधिक है। समाज में एकरूपता तथा सुविधा के लिए कई नियम गढ़े गए हैं। उस नियमावली के कारण मानव समाज में कुछ भिन्नता के साथ एकरूपता पाई जाती है। मानव अपने समाज में लगभग एक सा व्यवहार, कर्म, सोच आदि रखता है और इन्हीं के माध्यम से जिस प्रकार का घटनाक्रम समाज में जन्म लेता चला जाता है वह सामाजिक यथार्थ के रूप में ऊपरी तौर पर नज़र आता ही है। सामाजिक प्रक्रिया पारदर्शिता लिए होने के कारण यथार्थ की झलक को छुपाए नहीं छुपा सकती।

रचनाकार समाज का एक अंग होने के अलावा उस नज़रिए को रखता है जिससे वह अपने आसपास की सामाजिक बारीकियों को देख आत्मसात कर अपनी अनुभूतियों में उसे परिपक्व रख उसे अपने साहित्य द्वारा आकार प्रदान करता है।

"राजेश जोशी आम जन की पक्षधरता के प्रति बेहद जागरूक कवि है। उनकी कविता में हर कहीं जनवादी मूल्यों की स्थापना मिलती है लेकिन यह ध्यातव्य है कि वे रूढ़ या संकीर्ण जनवादी घेरे में कम नहीं घिरे। उनकी कविता में कहीं भी मैनीफेस्टोवादी दृष्टि नहीं मिलती। जीवन की निश्चल संसर्ग इस संसर्ग के दुख पराजय और विडंबनाएँ राजेश की कविता में पूरी कलात्मकता के साथ बिंबित होती है। वे स्थितियों और विडंबनाओं को पूरी संवेदना के साथ प्रस्तुत करते हैं।"[1]

अंततः राजेश जोशी जी के काव्यों के माध्यम से हमारे समाज का यथार्थ प्रस्तुत करने के प्रयास में मैं सजग हुई हूँ।

कवि राजेश जोशी जी की 'पत्थर' कविता की इन पंक्तियों में उन्होंने पत्थर का मानवीकरण कर किस प्रकार लोगों की क्रियाओं और व्यवहार पर प्रकाश डाला है –

"हम पत्थर थे
और अहसानमन्द थे
उस आदमी के
जिसने सबसे पहले
हमें एक शक्ल दी
एक चेहरा दिया।"[2]

कवि इस कविता में पत्थरों द्वारा उस आदमी के अहसानमंद होने की बात कहते हैं जिन्होंने उन्हें सबसे पहले शक्ल दी, दूसरा उन मज़दूरों का जिन्होंने उन्हें काटा, तराशा और मकानों में मीनारों में स्थापित कर अपने और करीब रखा। तीसरा उन औरतों का जिन्होंने उन्हें अपने घर की आत्मीय वस्तु बना लिया अर्थात् सिलबट्टा बनाकर अपनी दिनचर्या में शामिल कर लिया। चौथा उन आदिम मनुष्यों का जिन्होंने इनसे आग जलाई और उनके अंदर की शक्ति को पहचान दिलाई।

कवि इन अहसानों द्वारा यही स्पष्ट करते प्रतीत होते हैं कि किस कदर मानव अपने राजनैतिक, आर्थिक, पारिवारिक, सामाजिक तथा पौराणिक स्थिति के अनुकूल हर वस्तु को सुनिश्चित स्थान मुहाईयाँ करा उसके साथ व्यवहार करता है। अतः इन पंक्तियों से स्पष्ट होता है कि मानव समाज स्वार्थपूर्वक व्यवहार करता है

1 पृ.सं. 83: डॉ.पंडित गायकवाड: राजेश जोशी- सृजन के आयाम
2 पृ.सं. 40: राजेश जोशी: धूप घड़ी

जिससे फायदा उससे उतनी ही करीबी जिससे नुकसान उसे जीवन से बाहर धकेल देने का प्रयास आजीवन मानव समाज में देखा जा सकता है।

राजेश जोशी जी की 'ज़िद' कविता की इन पंक्तियों में समाज हित के लिए आवाज़ उठाते लोगों के प्रति समाज का रवैया दर्शाते हुए लिखते हैं कि-

"वे दुनियादार लोगों की सीमाएँ जानते हैं

उनके सिर पर भी है घर-गृहस्थी और बाल

बच्चों की जिम्मेदारियाँ

भरसक कोशिश करते हैं कि दोनों कामों में संतुलन बना रहे

पर ऐसा अक्सर हो नहीं पाता

घर में भी अक्सर झिडकियाँ सुननी पड़ती हैं उन्हें

सब उनसे एक ही सवाल पूछते हैं

कि दुनिया भर की फिक्र

वे ही क्यों अपने सिर पर लिए घूमते रहते हैं

कि उनके करने से क्या बदल जाएगा इस समाज में"[3]

आवाज़ को मिलकर उठाने पर ही उसकी ताकत का अंदाज़ा लगाया जा सकता है। एकलौती आवाज़ सिर्फ चीख-पुकार बनकर रह जाती है। समाज के भले के लिए सोचनेवालों की तादाद कम जरूर है परन्तु शून्य नहीं हुई है। बूँद-बूँद मिलकर ही समुद्र बनता है। इसी प्रकार प्रयास के मिलने से ही सफलता मिलती है। छोटे-छोटे विरोधों से ही सलतनतों को हिलाया गया है।

जो समाज के लिए, देश के लिए अपनी जिद के चलते अन्याय के खिलाफ लड़ने का साहस दिखा रहे हैं वह जिस एकलौते उनकी जिन्दा न रहकर पूरे देश की जिद बन जाए तो देश की तरक्की का रास्ता सुनिश्चित होकर ही रहेगा।

अतः मानव समाज का यथार्थ यही नज़र आता है कि सभी अपने को सुरक्षित रखने के प्रयास में कार्यरत हैं जिससे देश हित कभी संभव नहीं।

[3] पृ.सं. 34: राजेश जोशी: ज़िद

राजेश जोशी जी की 'हँसी' कविता में समाज जो मुस्कुराना भूलता जा रहा है इसका चित्रण अपनी इन पंक्तियों से करने का प्रयास कर दर्शाया है कि-

"ओ मेरे समय के लोगों।
मैं अनुरोध करता हूँ कि हँसो
शासक की अंधी ताकत बचने के लिए डरकर नहीं
हँसों कि हँसने के पल कम हो रहे हैं हमारी धरती पर
हँसों कि विरोध करने की ताकत कम हो रही है
हमारे समाज में
हँसों कि स्वप्न देखने का रोमान चुका रहा है।
हँसो।"[4]

आज के समाज में चेहरे के हावभाव ऐसे रहते हैं जैसे उनके जीवन में खुशी के पल रहे ही नहीं। आज के मानव के पास वह सब है जो बाहरी तौर पर उसे खुशी प्रदान करे पर अंदरौनी मानसिक खुशी का अकाल पड़ता जा रहा है।

मुस्कुराता वही है जो किसी भी चीज़ की परवा नहीं करता, न लोगों की बातों की, न हालातों की, न समाज की। कवि समाज के लोगों को अपने दिल में बसी दहशत को दूर कर खुश रहने का संदेश देते नज़र आ रहे हैं। कवि का कथन यह स्पष्ट तौर पर कहता है कि निराशा के बादलों के बीच भी अपने होठों पर मुस्कान की रेखा को बिखेरते चले जाओ। दुख को गले लगाकर उससे हार मानने के बजाय उससे डटकर सामना करने की बात कवि के माध्यम से व्यक्त हो रही है।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि राजेश जोशी जी का काव्य समाज की उन बारीकियों को पकड़कर उसे अपनी कलात्मक ढंग से इस कदर पाठकों के सामने परोसते हैं जैसे उन्हें उससे सरोकार न होने पर भी निवाला निगलना ही पड़ता हो। मानव के स्वार्थ ने ही उसे विनाश की कगार पर खड़ा कर दिया है। यदि वह अपनी इस स्थिति को बहुत जल्दी नहीं पहचानेगा तो उतना ही प्रचंड़ प्रकोप का भाजन वह बननेवाला है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

[1] पृ.सं. 83: डॉ.पंडित गायकवाड: राजेश जोशी- सृजन के आयाम

[4] पृ.सं. 131: राजेश जोशी: कवि ने कहा

[2] पृ.सं. 40: राजेश जोशी: धूप घड़ी

[3] पृ.सं. 34: राजेश जोशी: ज़िद

4 पृ.सं. 131: राजेश जोशी: कवि ने कहा

****